पार्थिक एकता का सिद्धान्त अथवा अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त

डॉ0 कुमार अमित
असिस्टेंट प्रोफेसर
भूगोल विभाग
डी0ए0वी0 कॉलेज, कानपुर

"पार्थिव एकता" का शाब्दिक अर्थ है पृथ्वी के सभी कारकों का आपस में एक दूसरे से भली प्रकार सम्बन्धित होना। इस सिद्धान्त का मूलतः यही आशय है कि संसार में विद्यमान प्रत्येक तत्व एवं पदार्थ एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है तथा एक दूसरे पर उनकी निर्भरता भी देखी जाती है। कोई भी स्वरूप या कोई भी दृश्यमान परिस्थिति भले भी प्रत्यक्षतः विलग दिखाई दे परन्तु वास्तव में उनका कोई स्वतंत्र आस्तित्व या रचनातंत्र नहीं होता है। प्रत्येक भौगोलिक कारक या परिस्थिति वास्तव में एक दूसरे से प्रभावित होती है। किसी भी परिस्थिति व कारक का मूर्तमान स्वरूप अन्य तत्वों के प्रभाव व जटिल रचनाक्रम के फलस्वरूप ही होता है। वास्तव में देखा जाये तो सम्पूर्ण पृथ्वी एक इकाई है, जिसके विभिन्न अंग या भाग पूर्णतः आपस में एक दूसरे से जुड़े हुये हैं। मानव भूगोल के तथ्यों का विकास भी वस्तुतः किसी न किसी कारक के अन्तर्सम्बन्धों का ही परिणाम है। कोई भी कारक अन्य कारकों से प्रभावित होकर ही विकसित होता है तथा अपने विकास व स्वरूप के पश्चात् अनेक अन्य कारकों को पुनः प्रभावित एवं नियंत्रित करता है। यही कारण है कि हम किसी भी भौगोलिक कारक का अध्ययन व विश्लेषण करते समय उन कारकों का अध्ययन करना आवश्यक समझते हैं जो उसे प्रभावित करते हैं। उदाहरणस्वरूप हम किसी प्रदेश विशेष में निवास करने वाले मानवों के जीवन, उनकी खानपान सम्बन्धित आदतें, वेशभूषा, सामाजिक जीवन सभी पर वहाँ के भौगोलिक वातावरण की स्पष्ट छाप देखते हैं तथा उसी प्रकार मानव भी अपने बुद्धि, विवेक से अर्जित ज्ञान तथा तकनीकि से स्थान विशेष के भौगोलिक कारकों को भी प्रभावित करता है। स्थान विशेष में मानव व पृथ्वी के इस अनुकूलन की विधियों में विविधता व अन्तर भी दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार, पृथ्वी भी एक इकाई स्वरूप है तथा इसके विभिन्न भाग आपस में एक दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा एक दूसरे से नियंत्रित भी हैं।

किसी भी प्राकृतिक प्रदेश के सभी भागों में सामान्यतः एक सी जलवायु, वनस्पति व मिट्टी पाई जाती है। जलवायु के विभिन्न कारक भी एक दूसरे से सम्बन्धित होते है; जिसके फलस्वरूप पृथ्वी तल

पर एक समान जलवायु वाले क्षेत्रों में एक प्रकार सी जीवन पद्धति और एक समान प्राकृतिक वनस्पति दृष्टिगत होती है। भूमि की बनावट, जलवायु के तत्व जैसे, तापमान, वायुदाब, वायुभार, वर्षा तथा वनस्पति व पशु–जगत में पारस्परिक क्रिया–कलाप भी एक दूसरे को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं एवं अपने जीवन–निर्वाह हेतु एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं।

उदाहरणस्वरूप, मिट्टी के स्वरूप व निर्माण में धरातल, व वनस्पति का पूर्णतः योगदान होता है लेकिन साथ ही साथ मिट्टी स्वयं भी वनस्पति को प्रभावित करती है। जलवायु के विभिन्न कारकों के प्रभाव को हम धरातलीय स्थलरूपों पर स्पष्ट देखते हैं परन्तु पर्वत व पठार भी जलवायु को पूरी तरह से प्रभावित करते हैं। ऊँचे पर्वत बादलों को रोककर वर्षा के स्वरूप में वितरण को प्रभावित करते हैं। जलवायु का प्रभाव वनस्पति पर होता है परन्तु वनस्पतियों व वनों की सघनता और विरलता जलवायु एवं उसके तत्वों को प्रभावित करती है। सघन व विस्तृत वनस्पति क्षेत्र स्थान विशेष के तापमान को प्रभावित करते हैं तथा वहाँ की आर्द्रता को बनाये रखने में अपना योगदान करते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि भौगौलिक वातावरण के सभी तत्व आपस में एक दूसरे पर निर्भर, अन्तर्सम्बन्धित एवं साथ ही एक दूसरे से संगठित भी होते है। इसी को हम ''पार्थिव एकता'' सिद्धान्त के नाम से जानते हैं।

Ratzel's Views- जर्मन मानव भूगोलवेत्ता 'फ्रेडरिक रैटजेल' ने सर्वप्रथम पार्थिव एकता सिद्धान्त की बात अपनी पुस्तक *'Anthropogeographic'* में स्पष्ट की। इस पुस्तक में उनहोंने पार्थिव एकता सिद्धान्त पर ही विशेष जोर दिया। उनके अनुसार ''मानव भूगोल के दृश्य पार्थिव एकता से सम्बन्धित हैं और केवल उसी के द्वारा समझाये जा सकते हैं। प्रत्येक स्थान पर भौगोलिक दृश्य वहाँ के वातावरण से सम्बन्धित है और वातावरण स्वयं भौतिक दशाओं का एक योग है।'' उन्होंने स्पष्ट किया कि भूपटल पर मानवीय क्रियाओं का अध्ययन भौगोलिक वातावरण के संदर्भ में किया जाता है। इस अध्ययन में पृथ्वी के विभिन्न कारकों के आपसी सम्बन्धों पर जोर दिया जाता है, जिसमें भौगोलिक एकता के दर्शन होते है।

कुमारी सैम्पुल के अनुसार 'मानव के विभिन्न क्रिया–कलापों का अध्ययन वैज्ञानिक रूप से उस पृथ्वी के बिना नहीं किया जा सकता जिस पर वह खेती करता है, यात्राएँ करता है तथा सामुद्रिक

व्यापार करता है।

हम्बोल्ट (Humboldt) ने भी इस सिद्धान्त का सर्मथन किया है, उन्होंने अपनी पुस्तक 'कॉस्मास' में पृथ्वी को एक जैविक व अविभक्त इकाई मानते हुए स्पष्ट किया है कि किसी भी भूदृश्य के निर्माण में वनस्पति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। उन्होंने लिखा है –''सम्पूर्ण पृथ्वी में एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक एक ही आत्मा व्याप्त है। एक ही जीवन पत्थर, पौधों, जानवरों और यहाँ तक कि स्वयं मानव में भी प्रवेश लिये हुये मिलता है।''

बर्गहोस ने अपनी पुस्तक 'Physical Atlas' में जलवायु एवं वनस्पति के सम्बन्धों को सुस्पष्ट करने का प्रयास किया है।

ब्लाश एवं ब्रूंज ने भी इस बात को बल प्रदान किया है कि किसी स्थान पर जितने भी जीवधारी जैसे–वनस्पति जन्तु और मनुष्य होते हैं, उन सबमें एक पारस्परिक सम्बन्ध होता है, और ये सब ही अपनी परस्थिति से समायोजन स्थापित करते हैं। उन्होंने आगे लिखा है कि सम्पूर्ण भौगोलिक प्रगति में प्रमुख विचार पार्थिक एकता ही है। पृथ्वी के सभी भाग किसी न किसी रूप में जुड़े हुये हैं जहाँ परिघटनाएं निश्चित क्रम का अनुसरण करती हैं। मानव भूगोल की परिघटनाएं भी पार्थिव एकता से सम्बन्धित हैं एवं केवल उसी के द्वारा इनकी व्याख्या की जा सकती है।

पार्थिव एकता का सिद्धान्त एक सारगर्भित सिद्धान्त है जो पूर्णतया विश्वसनीय है। इसका सार यही है कि वातावरण के सभी तथ्य चाहे वे प्राकृतिक हो अथवा सांस्कृतिक, एक दूसरे सम्बन्धित हैं तथा एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा स्वयं भी प्रभावित होते है। इस सिद्धान्त को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है।

1. पृथ्वी पर उपलब्ध जैव मण्डल के सभी तत्व पृथ्वी के धरातल से लेकर गहरे अथाह सागरों तक तथा वायुमण्डल सभी से जुड़े हुये हैं।
2. पृथ्वी पर जलवायु प्रदेशों के निर्धारण में सूर्यातप की उपलब्धता, प्रदेश की अक्षांशीय स्थिति, पृथ्वी की गति, सूर्य की किरणों के कोण, समुद्र तल से दूरी आदि कारकों की संयुक्त भूमिका

होती है। इनके सम्मिलित स्वरूप से ही जलवायु प्रदेशों का निर्धारण होता है।

3. पृथ्वी तल के सभी स्थल रूप जैसे पर्वत, पठार, झील नदियाँ अलग–अलग इकाईयों में प्रतीत होते हैं पर वास्तव में इनमें आपसी गहन सम्बद्धता होती है। नदियों द्वारा बनाये गये मैदान, नदी के बहाव, ढाल, पर्वत श्रृखला, अपक्षय एवं अपरदन सभी प्रकृति पर ही निर्भर हैं एवं एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं।

4. वनस्पति प्रदेश, जलवायु एवं धरातल तथा मिट्टियों के सम्मलित प्रभाव से ही निर्मित होते हैं, किसी स्थान पर कैसा पशुपालन होगा वह वहाँ की धरातल मिट्टी, वनस्पति व मानव ही मिलकर निर्धारित करते हैं।

5. कृषि फसलों का निर्धारण भी जलवायु के तत्वों जैसे वर्षा, तापमान, धरातल, मिट्टी, सागर से दूरी, मानव की भोजन ग्रहण करने की आदतें तथा बाजार आदि के द्वारा ही निर्धारित होता है।

6. प्रकृति में मिलने वाली पार्थिव एकता से मानव का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है; जहाँ मानव हेतु प्राकृतिक वातावरण अनुकूल होता है वहाँ पर मानव समुदाय अधिक क्रियाशील होता है। लेकिन विषम वातावरण में या विषम जलवायु में मानव का बसाव अल्प हो जाता है। आज वर्तमान समय में तकनीकि के अत्यधिक विकास ने विश्व को बहुत छोटा बना दिया है। अतः कह सकते हैं कि प्राकृतिक वातावरण की तरह सांस्कृतिक वातावरण में भी पार्थिव एकता का सिद्धान्त लागू होता है।

अतः हम कह सकते हैं कि मानव भूगोल के अध्ययन ने विभिन्न भौगोलिक कारकों का अध्ययन स्वतंत्र रूप से न करके बल्कि पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर ही किया जा सकता है। क्योंकि सारी पृथ्वी एक ही इकाई और उसके सारे तत्व आपस में पूर्णतया एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ए0डी0 कौशिक (2014), मानव भूगोल के सरल सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ, पृष्ठ संख्या 105–116

2. रामकुमार गुर्जर एंव बी0सी0 जाट (2012), मानव भूगोल, पंचशील प्रकाशन,जयपुर, पृष्ठ संख्या 63–73

3. मामोरिया एवं सिसोदिया (2018), मानव भूगोल, साहित्य भवन प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 97–110

4. Clifford, N.J.; S.L.; Rice, S.P.; Valentine, G., eds. (2009). Key Concepts in Geography (2nd ed.). London: SAGE. ISBN 978-1-4129-3021-5.

5. Peet, Richard, ed. (1998). Modern Geographical Thought. Oxford: Wiley-Blackwell. ISBN 978-1-55786-378-2.

6. Cloke, Paul J.; Crang, Phil; Crang, Philip; Goodwin, Mark (2005). Introducing human geographies (2nd ed.). London: Hodder Arnold. ISBN 978-0-340-88276-4.

7. Cloke, Paul J.; Crang, Philip; Goodwin, Mark (2004). Envisioning human geographies. London: Arnold. ISBN 978-0-340-72013-4.

8. Crang, Mike; Thrift, Nigel J. (2000). Thinking space. London: Routledge. ISBN 978-0-415-16016-2.

9. Daniels, Peter; Bradshaw, Michael; Shaw, Denis J.B.; Sidaway, James D. (2004). An Introduction to Human Geography: issues for the 21st century (2nd ed.). Prentice Hall. ISBN 978-0-13-121766-9.

10. de Blij, Harm; Jan, De (2008). Geography: realms, regions, and concepts. Hoboken, NJ: John Wiley. ISBN 978-0-470-12905-0.

11. Flowerdew, Robin; Martin, David (2005). Methods in human geography: a guide for students doing a research project (2nd ed.). Harlow: Prentice Hall. ISBN 978-0-582-47321-8.

12. Gregory, Derek; Martin, Ron G.; Smith, Graham (1994). Human geography: society, space and social science. Basingstoke: Macmillan. ISBN 978-0-333-45251-6.

13. Harvey, David D. (1996). Justice, Nature and the Geography of Difference. Blackwell Pub. ISBN 978-1-55786-680-6.